तालिबान: नेतृत्व संकट और चुनौतियाँ

डॉ स्मिता तिवारी*

तालिबान के संस्थापक और नेता, मुल्ला मोहम्मद ओमर, की मृत्यु की पुष्टि के साथ हीं तालिबान में नेतृत्व संकट की स्थिति पैदा हो गयी है। मुल्ला ओमर, एक ऐसा मजबूत स्तंभ था जिसके नेतृत्व में तालिबान दो दशकों से एकीकृत था. गौरतलब है कि मुल्ला ओमर पिछले कुछ वर्षों से तालिबान की गतिविधियों में सक्रिय नहीं था और ना ही उसे किसी सार्वजनिक जगह पर देखा गया था। कुछ ख़बरों के अनुसार, तालिबान के मुखिया और मार्गदर्शक की मृत्यु दो वर्ष पूर्व ही कराची (पाकिस्तान) के एक अस्पताल में हो चुकी थी, परन्तु तालिबान ने इसकी पुष्टि नहीं की थी। ऐसे में ये समझना ज़रूरी है कि ओमर की मृत्यु इस समय तालिबान के लिए क्या मायने रखती है? अगर मुल्ला ओमर की मृत्यु दो वर्ष पूर्व हो चुकी थी तो उसका खुलासा अभी क्यों किया गया? ओमर के बाद तालिबान को किन चुनौतियों का सामना करना पड़ेगा? अफगानिस्तान सरकार और तालिबान के बीच हाल ही में शुरू हुए शांति समझौते पर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा? और इन गतिविधियों का दक्षिण एशिया, विशेषकर, भारत पर क्या प्रभाव पड़ेगा?

मुल्ला ओमर की मृत्यु की घोषणा के बाद तालिबान ने मुल्ला अख़्तर मोहम्मद मंसूर को अपना नया नेता चुन लिया। तालिबान का नया नेता मुल्ला मंसूर पिछले तीन वर्षों से ओमर के डेप्युटी के रूप में, तालिबान का मार्गदर्शन कर रहा था। हालाँकि मंसूर अनुभवी होते हुए भी प्रसिद्ध नहीं है और उसे ओमर के परिवार एवम् वृहत स्तर पर तालिबान का समर्थन प्राप्त नहीं है। ओमर के बेटे याक़ूब और भाई अब्दुल मनन, मुल्ला मंसूर के नेता चुने जाने का विरोध कर रहे हैं। उनका आरोप है कि मंसूर का चुनाव क्वेटा, पाकिस्तान में उनके अपने समर्थकों के बीच हुआ और इसमें तालिबान के दूसरे नेताओं और योद्धाओं को शामिल नहीं किया गया। इसके अतिरिक्त मुल्ला मंसूर को पाकिस्तान के करीबी के रूप में देखा जाता है और यह माना जाता है कि अफगानिस्तान सरकार के साथ शांति समझौते के लिए भी मंसूर ने मुख्य भूमिका निभाई थी। अतः मंसूर की छवि एक 'नरम नेता' होने के कारण भी उसका विरोध हो रहा है।

हाल ही में काबुल और अफगानिस्तान के अन्य प्रांतों में तालिबान द्वारा किए जा रहे घातक हमले इस बात की ओर इशारा करते हैं ये मुल्ला मंसूर की अपनी नरम छवि सुधारने और अपने विरोधियों को चुप करने की कोशिश है। अमरूल्लाह सालेह, अफगानिस्तान की सुरक्षा एजेन्सी, नॅशनल डाइरेक्टोरेट ऑफ सेक्यूरिटी (एन डी एस) के पूर्व अध्यक्ष, के अनुसार, तालिबान के नेतृत्व परिवर्तन से उसके क्रियाकलाप में कुछ विशेष अंतर नहीं आएगा क्योंकि तालिबान का मुख्य नियंत्रण पाकिस्तान के हाथ में है। यह भी कहा जा रहा है कि चूँकि पाकिस्तान को मुल्ला ओमर की जगह तालिबान का नेतृत्व करने के लिए एक नये नेता को तैयार करना था, इसीलिए ओमर की मृत्यु को दो वर्षों के लिए छुपाया गया ताकि संगठन में शांति बनी रहे और नये नेता के आने से पहले कोई विद्रोह न हो। इसके अतिरिक्त, मुल्ला मंसूर का कहना है कि शांति समझौते की प्रक्रिया के दौरान काबुल सरकार के मुल्ला ओमर से मिलने, सीधा संपर्क करने और सहमति जुटाने के दबाव की वजह से उन्हें इस राज़ का खुलासा करना पड़ा। वर्तमान स्थिति में

तालिबान कई गुटों मे बिखरता हुआ प्रतीत हो रहा है, जिससे इस आंदोलन की वैधता और प्रभाव दोनों ख़तरे में है।

आंतरिक कलह के अलावा तालिबान को अफगानिस्तान सरकार का सामना भी करना पड़ेगा। हाल ही में शुरू हुई शांति समझौते की प्रक्रिया अब दिशाहीन प्रतीत होती है क्योंकि तालिबान की एकजुटता और अपना प्रभाव बनाए रखने के लिए मुल्ला मंसूर शांति का कोई प्रयास नहीं करेगा। गौरतलब है कि तालिबान के चरमपंथी अफगानिस्तान सरकार के साथ किसी भी प्रकार के शांति समझौते का विरोध करते हैं और अपने घातक हमले को जारी रखने का समर्थन करते हैं। उधर अफगानिस्तान सरकार ने भी, तालिबान के नेतृत्व संकट को देखते हुए, शांति प्रक्रिया पर अनिश्चित विराम लगा दिया है। वैसे देखा जाए तो मुल्ला ओमर तालिबान के लिए जितना महत्वपूर्ण था उतना ही अफगानिस्तान और बाकी पश्चिमी देशों के लिए भी, क्योंकि उसने अपने विलक्षण नेतृत्व क्षमता से पूरे तालिबान को एकजुट रखा, जो किसी भी शांति समझौते के प्रयास के लिए अर्थपूर्ण था। वर्तमान समय में अगर तालिबान दो या अधिक गुटों में बँट जाता है तो अफगानिस्तान सरकार और अन्य मध्यस्थता कराने वाले देशों को कठिनाई का सामना करना पड़ सकता है।

वर्तमान समय में इस्लामिक स्टेट भी तालिबान के लिए एक बड़ी चुनौती है। एक तरफ तालिबान पहले से ही संकट की स्थिति में है और दूसरे महत्वपूर्ण तालिबान नेता, जलालुद्दीन हॅक्कानी - हॅक्कानी नेटवर्क का संस्थापक - की मृत्यु की भी बात उठ रही है, हालाँकि इसकी पुष्टि नहीं हुई है। वहीं दूसरी तरफ कुख्यात नेता गुलबुद्दीन हेक्मतयार और कुछ अन्य ने इस्लामिक स्टेट के समर्थन की घोषणा कर दी है। अब अगर मुल्ला मंसूर, तालिबान को आगे ले जाने में असफल हो जाएगा तो इसका सीधा फ़ायदा इस्लामिक स्टेट को मिलेगा। अफगानिस्तान में इस्लामिक स्टेट की छोटी उपस्थिति मगर बढ़ती प्रसिद्धि ने इस समस्या को और जटिल बना

दिया है। तालिबान के भ्रमित और निराश सदस्यों के इस्लामिक स्टेट की ओर आकर्षित होने की संभावना है और इस्लामिक स्टेट भी ऐसे सदस्यों का फ़ायदा उठाने के लिए प्रयासरत है

मौजूदा स्थिति को देखते हुए तालिबान के भविष्य के बारे में दो कयास लगाए जा सकते हैं। पहला, तालिबान अपनी आंतरिक एकजुटता, निष्ठा और अनुशासन के कारण एक सक्रिय संगठन के रूप में बना रहेगा और तालिबानी चरमपंथियों के प्रभाव और इस्लामिक स्टेट के ख़तरे को देखते हुए कड़ा (घातक) रूप अपनाता रहेगा। निकट भविष्य में शांति समझौते के लिए कोई प्रयास नहीं किया जाएगा। दूसरा, तालिबान वित्तीय संकट, सामंती संघर्ष और बढ़ते इस्लामिक स्टेट के प्रभाव के कारण अनेक छोटे गुटों में बँट जाएगा और किसी भी गुट में अफगानिस्तान सरकार के साथ शांति समझौते की प्रक्रिया आगे बढ़ने की वैधता नहीं होगी।

इन गतिविधियों का दक्षिण एशिया, विशेषकर भारत पर भी गहरा असर होगा। दक्षिण एशिया में उग्रवाद के बढ़ने के साथ साथ असुरक्षा, अशांति और आतंक का माहौल बनेगा। आई. ए. एस. एफ. की अफगानिस्तान से वापसी के बाद तालिबान के घातक हमले बढ़े हैं, जो राजनीतिक अस्थिरता को जन्म दे सकते हैं। भारत और अफ्गानिस्तान के दूरगामी संबंधों के लिए ऐसी राजनीतिक अस्थिरता भारत के विकास संबंधी कार्यों पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकती है। इसके साथ ही पाकिस्तान का तालिबान पर प्रभाव को समझते हुए इसका अनुमान लगाया जा सकता है कि तालिबान पूर्ववत भारत के हितों के विपरीत कार्य करेगा। इस्लामिक स्टेट पहले से ही भारत सहित दक्षिण एशिया में अपनी मौजूदगी दर्ज़ करवा चुका है और तालिबान के कमजोर होते ही अपनी पकड़ मजबूत बना लेगा। बढ़ता आतंकवाद भारत के लिए चिंता का विषय है। भारत अपने सरीखे आतंकवाद से पीड़ित देशों (मध्य एशिया, ईरान, रूस इत्यादि) के साथ आम सहमति बनाकर आतंकवाद के खिलाफ एक संयुक्त कदम उठाने का प्रयास कर सकता है।

डॉ स्मिता तिवारी विश्व मामलों की भारतीय परिषद में अनुसंधान अध्येता हैं। ये उनके व्यक्तिगत विचार हैं।